प्रकाशित: 26 सितम्बर 2017 को दैनिक जागरण में प्रकाशित -

आदर्श राज्य व्यवस्था का आधार

भूपेंद्र यादव

प्रत्येक समाज मानव जीवन और सत्ता के स्वरूप में जो समझ रखता है उसी अपेक्षा से सुशासन के मॉडल पर विचार करता है। भारतीय राज्य व्यवस्था हेतु वैदिक कालीन ऋषियों से लेकर समकालीन चिंतकों तक शासन के आदर्श रूप पर चिंतन मनन किया गया। जो व्यवहार में परिणत हुए उनके गुण-दोष की समीक्षा की गई। हमारा देश सत्तर वर्षो के लोकतांत्रिक अभ्यास में इन प्रश्नों से जूझता रहा है। प्रत्येक देश की भौगोलिक परिस्थिति, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्य विशिष्ट होते हैं और उनकी अवहेलना शासन में नहीं की जा सकती। भारत भी एक विशिष्ट स्वरूप वाला राष्ट्र है जिसमें परस्पर समभाव और एक्यता का अनुभव स्वीकार करते हुए शासन व्यवस्था सुचारू रूप से चलाई जा सकती है । एकता-प्रेम-सद्भाव-सामंजस्य का ऐसा ही मॉडल पंडित दीनदयाल जी उपाध्याय का एकात्म मानव दर्शन प्रस्तुत करता है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय द्वारा रचित लेखों, पत्राचार और चर्चाओं में प्रत्येक विचार तात्विक और नैतिक आयामों से गहरा जुड़ा होता था, क्योंकि वे भारत की उस मूल परंपरा के प्रतिनिधि है जिसमें धर्म नैतिकता एवं सदाचार का ही रूप है। धर्म की यह धारणा सिर्फ पारलौकिक नहीं थी। यह इसी संसार में सुव्यस्थित रहने का आदर्श था। स्वयं दीनदयाल जी भी विचार में ही नहीं, अपितु अपने जीवन में भी इन आदर्शो का पालन करते रहे। राज्य व्यवस्था और राजनीतिक क्षेत्र में नैतिकता के प्रश्न किस प्रकार से व्यवहार से जुड़े हैं, एकात्म मानववाद का दर्शन इस रूप में भी हमारा मार्गदर्शन करता है। राजनीति और नैतिकता परस्पर सबंधित हैं। पाश्चात्य दर्शन में इसे प्लेटो का रिपब्लिक, अरस्तु का निकोमेकियन एथिक्स और भारतीय दर्शन में कौटिल्य का अर्थशास्त्र और महात्मा गांधी का हिंद स्वराज भी स्पष्ट करता है। नैतिकता व्यक्तिगत शुभ से संबंधित है, परंतु व्यक्तिगत शुभ का निर्धारण सामाजिक शुभ की अपेक्षा से ही होता है। इसी प्रकार राजनीतिशास्त्र सामाजिक शुभ का लक्ष्य रखता है, परंतु व्यक्तिगत शुभ की अवहेलना आदर्श राज्य व्यवस्था की रचना नही करा सकती। एकात्म मानववाद व्यष्टि और समष्टि की परस्पर पूरकता का दर्शन है। व्यक्ति और समाज का संबंध सजीव है। यह ईंटों और मकान का संबंध नहीं है। समाज एक सावयव संरचना है जिसमें व्यक्ति और राज्य का संबंध वही है जो शरीर का सजीव कोशिकाओं से होता है। इस दृष्टि से व्यक्तिगत और राज्य के हितों का टकराव नहीं हो सकता।एकात्ममानव दर्शन समन्वयात्मक दर्शन है जिसमें मनुष्य के भौतिक पक्ष, बौद्धिक पक्ष और आध्यात्मिक पक्ष, सभी की पारस्परिकता को स्वीकारा गया है। यूनानी दर्शन की राज्य व्यवस्था में बौद्धिक मूल्यों की प्रधानता है। भारतीय परंपरा में ऋषि बौद्धिकता से भी आगे आध्यात्मिक मूल्यों तक पहुंचे। इस दृष्टि से हमारी व्यवस्था में शुद्व कत्र्तव्यनिष्ठा के साथ प्रेम एवं सद्भाव रूपी आध्यात्मिक मूल्यों का भी स्थान है। एकात्म मानववाद ऊंच, नीच, क्षुद्र और

मूल्यवान की इकाइयों में भेद दृष्टि नहीं रखता। यहां विकास के क्रम एवं जीने के क्रम में सब अलग-अलग नहीं है। न ही किसी का किसी से संघर्ष और प्रतिस्पर्धा है। इस दर्शन के अनुसार मनुष्य, प्रकृति, ईश्वर सभी एक दूसरे के सहयोगी हैं। व्यक्ति एवं समाज सरकार एवं जनता परस्पर पूरक हैं। शोषण, हिंसा, संघर्ष जीवन का अनिवार्य भाग नहीं हैं, क्योंकि संयम और अनुशासन प्रत्येक व्यक्ति के लिए हैं। एकात्म मानववाद व्यवस्था की सभी इकाइयों को सत्य एवं आवश्यक मानता है। हमारी आत्म चेतना का जैसे-जैसे विस्तार होता है वैसे-वैसे उनके मध्य स्थित संबंधों के साक्षात्कार की दृष्टि का विकास होता है। तिरस्कार, परित्याग या निषेध किसी का नहीं है। बीज से अंकुर, अंकुर से पौधा और पौधे पर शाखाएं एवं पत्ते आते हैं तो वे असंबद्ध नहीं होते हैं। इन्हें एक दूसरे की अपेक्षा है। छोटी इकाई से लेकर बड़ी इकाई तक एकात्मकता है। पुराने पत्ते गिरते हैं। नए आते हैं। यहां परिवर्तन का भी स्थान है। एकात्म मानववाद यही विचार है। इसमें सबसे छोटी इकाई पर भी बल है। समाज की सबसे छोटी इकाई मनुष्य है। इसे भी अपनी संपूर्णता में देखकर विकास करना होगा। राष्ट्र से भिन्न उसके विरोध में व्यक्ति की स्वतंत्रता एवं विकास की संभावना ही नहीं है। व्यक्ति और समाज व्यष्टि एवं समष्टि, दोनों स्तरों पर शरीर, मन, बुद्वि और आत्मा के समुच्चय हैं। यदि हम व्यक्ति स्वातंत्र्य की स्थिति को निरपेक्ष रूप से स्वीकार कर लें तो मन के लिए समाज रचना नहीं होगी। समाज के बिना बुद्धि और आत्मविकास के अवसर उपलब्ध नहीं होंगे। इसलिए ऐसी व्यवस्था हम सबको मिलकर समाज और शासन की बनानी होगी जिसमें संघर्ष और प्रतिस्पर्धा न हो सामंजस्यता और एकात्मकता हो। सभी सामाजिक संस्थाओं का सम्मान इस व्यवस्था मे हो। दीनदयाल जी ने शासन के मॉडल पूंजीवाद, समाजवाद, साम्यवाद की निष्पक्षता से समीक्षा कर बताया कि ये मनुष्य के वास्तविक स्वरूप का परीक्षण किए बिना ही प्रयोग में लिए गए। फलत: शोषण एवं संघर्ष व्यवस्था के आवश्यक भाग बन गए। उक्त सिद्धांतों ने मनुष्य अस्तित्व को मात्र मनौदैहिक माना। बुद्वि के सिद्धांतों ने अधिकतम लोगों के सुख को ही व्यावहारिक माना, क्योंकि यह विचार उनके लिए नया था कि हम सब का अस्तित्व एक-दूसरे से जुड़ा हुआ है। इस रूप में मनुष्य और समाज, मनुष्य और मनुष्य, मनुष्य और प्रकृति और मनुष्य एवं ईश्वर एक-दूसरे के पूरक एवं सहयोगी हैं। सहयोग एवं समन्वय की इसी भावना के आधार पर लोकतंत्र का आदर्श स्वरूप प्राप्त किया जा सकता है। भारतीय राज्य की पुनर्रचना पर विचार करते हुए जयप्रकाश नारायण ने लिखा है कि वास्तविक लोकतंत्र यथार्थ नहीं होता, क्योंकि जनता कभी सीधे शासन नही चलाती। यह जनता के विशिष्ट जनों का ही शासन होता है। दीनदयाल जी के दर्शन में कोई विशिष्टजन नहीं है सभी व्यवस्था के भाग हैं। एकात्म मानवदर्शन में अंतरराष्ट्रीयवाद के लिए भी स्थान है। यह अंतरराष्ट्रीयवाद सभी स्वायत्त राष्ट्रों की अवधारणा पर आधारित है। यहां न साम्राज्यवाद है और न ही विश्व राज्य का एक केंद्रीय सिद्धांत है। प्रत्येक राष्ट्र अपनी संस्कृति के अनुसार विकास करे और विश्वात्मा को मन में रखते हुए एक-दूसरे का सहयोगी और पोषक बने यही एकात्म मानववाद की अंतिम परिणति है।

[लेखक भाजपा महासचिव और राज्यसभा के सदस्य हैं]